संत चैतन्य महाप्रभु

बंगाल के नवद्वीप नगर में फाल्गुन की पूर्णमासी को सन् 1448 ई. चैतन्य महाप्रभु का जन्म हुआ। इनके पिता का नाम पं. जगन्नाथ मिश्र और माता का नाम शची देवी था। चैतन्य अपने माता-पिता की दसवीं संतान थे। इनसे पहले लगातार आठ बहनों की मृत्यु हो चुकी थी। फिर एक लड़का पैदा हुआ, जिसका नाम विश्वरूप रखा गया। दस वर्ष बाद एक दूसरा बच्चा पैदा हुआ। पिता ने इस बच्चे का नाम विश्वम्भर रखा तथा माता ने निमाई नामकरण किया। बाद में यज्ञोपवित के अवसर पर गौरांग नाम दिया गया तथा कृष्णचैतन्य नाम से भी पुकारा जाने लगा।

लड़का बहुत सुन्दर और चंचल था। माता-पिता की आँखों का तारा था। एक पल भी ये लोग अपनी आँखों से ओझल नहीं होने देते थे। बच्चा जब अपने पैरों पर खड़ा होने लगा, तो और भी सावधानी बरती जाने लगी कि कहीं खो न जाय। एक दिन सावधानी के बावजूद एक कोबरा साँप से खेलता हुआ पाया गया। दूसरे दिन आभूषण के लालच में एक चोर उठा ले गया। लोग चिन्तित होने लगे। लेकिन बच्चे का पता नहीं मिला। अंत मे वह अपने ही आँगन मे खेलता हुआ पाया गया। चोर ले जाने को तो उठा ले गया, लेकिन बच्चे के निर्दोष स्पर्श एवं मधुर वाणी ने उसका हृदय परिवर्तन कर दिया। वह चुपके से बच्चे को आँगन मे छोड़ गया और वैराग्य ले लिया।

निमाई के नृत्य में कमाल हासिल था। मालूम होता था कि कोई अदृश्य शक्ति काम कर रही है। कभी-कभी प्रेमातिरेक से वह जमीन पर गिर जाता था। देखनेवाले आँसू बहाने लगते थे।

बारी-बारी से निमाई की दो शादियाँ हुई। पहली लक्ष्मी देवी की मृत्यु के बाद दूसरा विवाह विष्णुप्रिया के साथ हुआ। बचपन से ही कई चमत्कारपूर्ण घटनाएँ घटित होने लगीं। निभाई की बाललीलाएँ कृष्ण बाललीलाओं की याद दिलाती थी। गंगा की रेत में खेलना, शैतान लड़कों की अगुआई करना तथा पूजा के समय वैष्णवों को तंग करना नित प्रति का काम था।

देश में आज भी छुआछूत का भूत तथा दूसरे प्रकार के भेदभाव समाज की जड़ कमजोर कर रहे है। उन दिनों इनका और भी जोर था। निमाई इन छोटी-छोटी बातों के ऊपर था। मनुष्य-मनुष्य के बीच भेद करना तथा जाति-पाँति के झूठे भेदभाव में विश्वास करना उनके स्वभाव में न था। अत: उनके कीर्त्तन में सब तरह के लोग शामिल होते थे।

गया में ईश्वरपुरी संन्यासी ने चैतन्य को दीक्षा दी। ज्यों ही कान में मन्त्र फूँका गया, चैतन्य बेहोश हो गये और उसी हालत में कृष्ण की पुकार करने लगे। होश आने पर वृन्दावन जाने की तैयारी की, लेकिन ईश्वरपुरी के समझाने पर नवद्वीप वापस लौटे।

लगभग सोलह वर्ष की अवस्था में चैतन्य के बडे भाई विश्वरूप ने घर से भागकर संन्यास ले लिया। कुछ दिनों के बाद पिता परलोक सिधार गये। इन घटनाओं का चैतन्य पर गहरा असर पड़ा। उन्होंने अध्ययन में मन लगाया और व्याकरण तथा दूसरे शास्त्रों में बड़ी ख्याति प्राप्त की। इसके लिए मित्र पंडित रघुनाथ न्याय पर एक पुस्तक लिख रहे थे। उन्हें पता चला कि चैतन्य ने भी इस विषय पर एक पुस्तक तैयार की है। उन्हें चिन्ता हुई। आग्रह करके चैतन्य की पुस्तक उन्होंने गंगा में नाव पर बैठ कर सुनी। सुनते-सुनते रोने लगे। चैतन्य ने रोने का कारण पूछा; तो बतलाया कि हमारी सारी मेहनत बेकार गयी। अब हमारी पुस्तक कौन पूछेगा ? चैतन्य ने हँसते हुए अपनी पुस्तक गंगा में फेंक दी और मित्र को सान्त्वना दी।

लड़को को पढ़ाने के लिए इन्होंने एक पाठशाला खोल रखी थी। ईश्वरपुरी से दीक्षा लेने के बाद पाठशाला में इनका मन नहीं लगा। पढाते समय कृष्ण की लीलाओं का वर्णन करते हुए फूट-फूटकर रोने लगते थे। धीरे-धीरे पाठशाला बन्द हो गयी। कीर्तन का जोर बढ़ा और भक्तों की संख्या बढ़ने लगी। कृष्ण का नाम लेते ही चैतन्य की आँखो से अश्रुधारा बहने लगती थी। बड़े-बड़े विद्वान कीर्तन में भाग लेने लगे। चैतन्य की ख्याति चारों ओर फैल गयी। लोग उन्हें कृष्ण का अवतार मानने लगे।

उन दिनों बंगाल में काली-पूजा का जोर था, बलि देने की प्रथा थी। चैतन्य इस हिंसा के विरोध में खडे हुए। स्वार्थी लोगो ने वहाँ काजी से शिकायत की कि कीर्तन के बहाने ये बुराई फैला रहे है। रात में सोने नहीं देते मुसलमानों को भी कृष्ण भक्त बना रहे हैं।

इन लोगों से प्रभावित होकर काजी ने कीर्तन पर प्रतिबन्ध लगा दिया। चैतन्य अडिग रहे। उन्होंने घोष्णा की कि बाजारों में कीर्तन करते हुए काजी के मकान तक जाकर वहाँ कीर्तन किया जायगा। 'हरि बोल' की ध्वनि से आकाश गूँज उठा। चैतन्य की भक्ति देखकर विरोधियों के होश गुम होने लगे। चरणों में गिरकर सबने क्षमा माँगी। जनता काजी के विरोध में नारे लगाने लगी। काजी को मारने के लिए लोग उत्तेजित हो उठे।

चैतन्य ने जब यह सुना तो कीर्तन बन्द करके बोले, "काजी का बुरा करनेवाला मेरा बुरा करेगा," लोग शान्त हो गये। काजी डर के मारे घर मे छिप कर बैठ गया। चैतन्य ने बहुत विश्वास दिलाकर उसे बाहर बुलाया। वहीं चैतन्य का ननिहाल भी था। उन्होंन प्रेमपूर्वक काजी से कहा, "मामाजी! यह भी कोई बात है कि भानजा मिलने आवे और मामा किवाड़ बन्द कर लें ?" काजी के हृदय पर ऐसा असर पड़ा कि वह भी कीर्तन में शामिल हो गया।
चैतन्य के सम्पर्क में आनेवाला प्रत्येक व्यक्ति उनकी भक्ति से प्रभावित हो जाता था। कितने ही लोगों ने बुराई छोड़कर भक्ति का मार्ग अपनाया। द्वैत और अद्वैत का उन्होंने समन्वय किया। उद्धार के लिए भगवान के नाम का जाप और कीर्तन को मुख्य बताया।

"चेतो दर्पण मार्जनंभव महादावाग्नि निर्वापणं, श्रेय: कैरवचन्द्रिका वितरंण विद्यावधु जीवनम्।

आनन्दाम्बुधि वर्धनं प्रतिपदं पूर्णामृतास्वादनं, सर्वात्म स्वपनं परं विजयते श्री कृष्ण संकीर्तनम्।"

श्री कृष्ण के संकीर्तन की तुलना में और कोई भी साधना नहीं ठहर सकती। वह चितरूपी दर्पण को स्वच्छ कर देता है तथा संसाररूपी दावानल को बूझा देता। कल्याणरूपी कुमुद को किरण-जाल से विकसित करता है तथा आनन्दसागर को बढ़ानेवाला चन्द्रमा है। विद्यारूपी वधू को जीवन देता है तथा पद-पद पर अमृत पान कराता है एवं सम्पूर्ण आत्माओं को शांति एवं आनन्द की धारा में डुबा देता है।

भगवान् को कारणहित कृपालु कहा गया। इसलिये भक्तों को भी उसके चरणों में अहैतुकी भक्ति जगानी चाहिए। चैतन्य महाप्रभु ने इस बात को एक श्लोक में लिखा है कि:-

न धनं न जनं न सुन्दरी कवितां वा जगदीश कामये, मम जन्मनि जन्मनीश्वरे भगवताद् भक्तिरहैतुकी त्ययि।

"हे जगदीश्वर ! मुझे न तो धनबल चाहिए और न जनबल। सुन्दर स्त्री और कवित्व शक्ति भी नहीं चाहिए।
जन्म-जन्मान्तर तक आपके चरणों में अकारण प्रीति बनी रहे-यही कामना है।"

अहैतुकी भक्ति ही कामना ने चैतन्य को उस धरातल पर पहुँचा दिया, जहाँ इस बात की भी चिन्ता नहीं रह गयी कि भगवान् हमको अपनायेंगे अथवा नहीं अपनायेगें ? निष्काम व्यक्ति को ऐसी चिन्ता हो भी कैसे सकती है? उसे तो अपना धर्म निभाना है उसका परिणाम क्या होता है, इस बात की चिन्ता करने की फुरसत कहाँ है? इसलिए वे कहते है-

आश्लिष्य वा पादरतां पिनष्टु माम दर्शन मर्माहतां करोतु वा:।
यथा तथा वा विदधातु लम्पटो मत्प्राण नाथस्तु सं एव ना पर:।

'वह लम्पट चाहे मुझे गले से लगावे अथवा अपने चरणों के तले दबाकर पीस डाले अथवा आँखों से ओझल रहकर मुझे मर्माहत करे। वह जो कुछ भी करे, मेरा प्राणनाथ तो वही है, दूसरा कोई नहीं।

दैवी सम्पत्ति करने पर भी चैतन्य महाप्रभु ने जोर दिया है। आचरण की पवित्रता सम्बन्धी अनुशासन में उन्होंने अपने शिष्यों के लिए वह नियम बना दिया था कि कोई भी किसी स्त्री से बात नहीं कर सकता । एक बार इनके शिष्य हरिदास ने माधवी नामक एक वृद्धा स्त्री सी बात कर ली। यह स्त्री भी भक्त थी। फिर भी चैतन्य महाप्रभु ने सदा के लिए हरिदास का परित्याग कर दिया। हरिदास जी ने आत्महत्या कर ली।

चैतन्य महाप्रभु के जीवन के अन्तिम 6 वर्ष राधा भाव से बीते। कृष्ण-विरह मे विह्नल होकर इनका रोना-चीखना दूसरों को भी रूला देता था। इनके जीवन में बहुत-सी अलौकिक घटनाएँ घटित हुई ; जिनसे इनका ईश्वरत्व प्रकट होता है इनको लोगों ने अनेक रूपों में देखा। इनके प्रसाद से बहुत -सी असम्भव हो गयीं।

जगाई और मघाई दो भाई थे। नदिया नगर में इनका इतना आतंक था कि लोगों को कहीं शरण नहीं मिल पाती थी। निताई और हरिदास इन दो भक्तों ने तय किया कि जगाई और मघाई को कृष्णभक्ति का उपदेश किया जाय। ये दोनों भाई तंत्रों में विश्वास करते थे। अत्यन्त क्रूर और निर्दयी थे।

निताई ने जब इन दोनों भाइयों से कृष्ण - भक्ति अपनाने का आग्रह किया जो ये क्रुद्ध हो उठे और धोखेबाज कहकर भगा दिया। निताई को इस असफलता पर निराशा न हुई। उसने हरिदास को सुपुर्द किया कि दोनों भाईयों से सम्पर्क करके कृष्ण-प्रेम और भक्ति से प्रभावित करे। इस बार जगाई और मधाई ने आसानी से पहचान लिया कि जिनको हमने भगाया था, वे ही लोग पुन: आ गये। अत: नाराज होकर कहा कि अब तुमलोगों को सबक सिखाना ही होगा। ऐसा कहकर उन्होंने प्रहार किया। चुँकि दोनों भाई शराब के नशे में थे, अत: शीध्र वापस चले गये। दोपहर बाद चैतन्य को इस घटना की सूचना मिली। निताई ने उनसे कहा कि हमको अपना मोक्ष नहीं चाहिए। लेकिन दुनिया में सबसे बड़े अपराधी इन दो भाइयों को तो उद्वार कीजिये।

चैतन्य महाप्रभु ने आशा बँधाते हुए कहा कि उनके कल्याण की कामना करो। भगवान् तुम्हारी ईच्छा पूरी करेंगे। फिर नदिया में पहली बार सार्वजनिक कीर्त्तन का आयोजन किया गया। महाप्रभु कीर्त्तन दल के साथ दोनों भाइयों को प्रभावित करने की दृष्टि से उनके पास गये। चुँकि रात में दोनों भाई पीने और अपराध-कार्यों में लगे रहते थे, अत: कीर्त्तन दल के पहुँचने पर गहरी नींद में सो रहे थे। कीर्त्तन के कारण इनकी नींद खुल गयी। इन्होंने कीर्त्तन बन्द कराने के लिए अपने आदमी भेजे। आदमियों ने आकर रिपार्ट दी कि वे लोग नहीं मान रहे हैं।

यह सुनना था कि दोनों भाई क्रोध में यह कहते हुए चल पड़े कि आज इस बला को समाप्त करके छोडेंगे। देखते-ही-देखते दोनों कीर्त्तन - स्थल पर पहुँचे गये। सामने निताई को देखकर आग-बबूला हो उठे और मारने की योजना कर ही रहे थे कि निताई ने विनम्रतापूर्वक कहा - ‘‘मेरे प्यारे अच्छे भाई! मुझे मारकर क्या पाओगे ? भगवान् कृष्ण का स्मरण करो। वही पूजनीय है’’

मघाई ने मिट्टी का एक पात्र उठाकर निताई के सिर पर दे मारा। खून की धारा वह निकली। वह दुबारा प्रहार करना चाहता ही था कि जगाई ने रोक दिया।

इस दुर्घटना की खबर चैतन्य महाप्रभु को मिली, तो तत्काल घटना-स्थल पर पहुँच गये। उन्होंने निताई के घाव पर अपनी चादर लपेट दी। स्पर्श से ही वह चंगा हो गया। फिर महाप्रभु ने जगाई और मघाई

को सम्बोधित करते हुए कहा-''क्या तुमको अपने किये पर पछतावा नहीं है। तुने भगवान् के भक्त का अपमान किया है। निहत्थे आदमी पर आघात किया है। अत: सजा भुगतने के लिए तैयार हो जाओ।'' लोगों को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि जिनकी ओर लोग देखने से घबड़ाते थे तथा जिन्हें टोकनेवाला कोई नहीं था, वे जगाई और मघाई अपराधी की तरह हाथ जोड़कर खडे है। उनकी वाणी को जैसे काठ मार गया हो।

चैतन्य महाप्रभु के हाथ में चक्र देखकर निताई को चिन्ता हुई। उन्होंने प्रार्थना की कि दोनों भाइयों का अपराध क्षमा कर दिया जाय। उन्होंने यह भी कहा कि जगाई ने ही मेरी जान बचायी है। महाप्रभु ने जगाई को माफ कर दिया तथा आलिंगन किया, जिससे वह विक्षिप्त होकर जमीन पर गिर पड़ा उसमें ईश्वर-शक्ति का प्रवेश हो गया। दूसरे भाई मघाई से कहा कि जबतक निताई तुम्हें क्षमा नहीं करेंगे, मैं मदद नहीं कर सकता। मघाई को सजा का डर न था; लेकिन यह जानना चाहता था कि कौन-सा प्रायश्चित करने से भगवान् अपने चरणों में शरण देंगे। अत: उसने निताई के पाँव पकड़ लिये और क्षमा-याचना करने लगा। निताई ने उसे गले लगाया और क्षमादान दिया। निताई के आलिंगन से वह बेहोश होकर धरती पर गिर पड़ा। दोनों भाइयों को उसी हालत में छोड़कर सब लोक वापस चले गये।

शाम को दोनों भाई चैतन्य महाप्रभु के निवास पहुँचे । पैरों पर गिर पड़े और प्रायश्चित भाव से प्रार्थना करने लगे। महाप्रभु ने दोनों को अपनाया। शास्त्र-विधि से प्रायश्चित कराया और इस तरह घनघोर पापियों को पुण्य-आत्मा बना दिया। भूले-भटके लोगों की सद्मार्ग पर अग्रसर कराते हुए तथा भगवान् की भक्ति का सरल मार्ग 'नाम-कीर्त्तन' की ज्योति जगाते हुए चैतन्य महाप्रभु की इहलीला 1532 ई. में 48 वर्ष की अवस्था में रथयात्रा के दिन समाप्त हो गयी।